नईदुनिया

संपादकीय

पनीर के नाम पर भरोसे का कारोबार

पनीर भारतीय भोजन का ऐसा हिस्सा है, जिसे स्वाद के साथ पोषण के लिए भी पसंद किया जाता है। लेकिन बाजार में पनीर के नाम पर दूध से अलग सामग्री से बने उत्पादों की मौजूदगी ने एक महत्वपूर्ण सवाल खड़ा किया है: ग्राहक जो समझकर खरीद रहा है, क्या उसे वास्तव में वही मिल रहा है? समस्या सस्ता विकल्प उपलब्ध होने में नहीं, बल्कि उसकी पहचान छिपाकर उसे असली पनीर के रूप में बेचने में है।

भारतीय खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण ने 24 सितंबर 2026 को इसी मुद्दे पर नया संशोधन मसौदा जारी किया है। इसमें दूध से प्राप्त घटकों से नहीं बने पनीर की बिक्री पर प्रतिबंध से जुड़े प्रावधान प्रस्तावित किए गए हैं। यह अभी मसौदा है, अंतिम नियम नहीं।

दरअसल, यह मामला केवल खाद्य मिलावट का नहीं, बाजार में पारदर्शिता का भी है। दूध से बने पनीर और वनस्पति वसा, स्टार्च या दूसरे गैर-दुग्ध घटकों से बने उत्पाद की लागत अलग हो सकती है। इसलिए किसी उपभोक्ता को कम कीमत वाला विकल्प उपलब्ध कराना अपने आप में अनुचित नहीं है। लेकिन यदि वह विकल्प पनीर के नाम से बेचा जाए तो ग्राहक के पास सही चुनाव करने की स्वतंत्रता नहीं रह जाती। यही वह बिंदु है, जहां खाद्य कारोबार और उपभोक्ता अधिकार आमने-सामने आते हैं।

खाद्य नियामक पहले भी इस समस्या को लेकर कदम उठा चुका है। अप्रैल 2026 में जारी निर्देशों में केंद्रीय लाइसेंस वाले खाद्य प्रतिष्ठानों को कहा गया कि यदि पनीर के स्थान पर चीज एनालॉग का इस्तेमाल किया जा रहा है तो उसे मेन्यू या सूचना पट्ट पर स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करना होगा। साथ ही खाद्य प्रतिष्ठानों को खरीदे गए कच्चे माल की जांच और उसके अभिलेख रखने की जिम्मेदारी भी दी गई है। इससे पहले 2025 के परामर्श पत्र में भी भोजनालयों में गैर-दुग्ध विकल्प की स्पष्ट पहचान, उसे खुले रूप में बेचने पर रोक और ऐसे उत्पाद बनाने वाली इकाइयों के लिए अधिक जवाबदेह लाइसेंस व्यवस्था जैसे सुझाव सामने आए थे। अब जरूरत इस बात की है कि नए नियम केवल प्रतिबंध तक सीमित न रहें। गैर-दुग्ध उत्पाद के लिए अलग और आसानी से समझ आने वाला नाम तय किया जाए। पैकेट पर उसकी वास्तविक सामग्री बड़े और स्पष्ट अक्षरों में लिखी हो। रेस्टोरेंट और होटल के मेन्यू में भी ग्राहक को बताया जाए कि किसी व्यंजन में दूध का पनीर इस्तेमाल हुआ है या उसका विकल्प। इससे बाजार में प्रतिस्पर्धा भी रहेगी और उपभोक्ता के साथ छल की गुंजाइश भी कम होगी।

एफएसएसएआई की विशेषज्ञ चर्चा में यह बात भी सामने आई है कि ऐसे अनुरूप उत्पादों के लिए स्पष्ट गुणवत्ता मानक न होने से निगरानी और प्रवर्तन कठिन होता है। इसलिए केवल नाम बदलना पर्याप्त नहीं होगा। उत्पाद की संरचना, पोषण गुणवत्ता, पैकेजिंग और बिक्री की पूरी व्यवस्था स्पष्ट करनी होगी।

पनीर के नाम पर होने वाला भ्रम खत्म करने का सबसे प्रभावी रास्ता उपभोक्ता को सही जानकारी देना है। आखिर बाजार में सस्ता विकल्प उपलब्ध होना समस्या नहीं, सस्ते विकल्प को महंगे असली उत्पाद के रूप में बेचना समस्या है। खाद्य सुरक्षा का अर्थ केवल नुकसानदायक चीजों को रोकना नहीं, बल्कि ग्राहक को यह अधिकार देना भी है कि वह अपनी थाली के बारे में सही जानकारी के आधार पर फैसला कर सके।

एआई की स्वायत्तता पर अब निगरानी की नई दीवार जरूरी

अपूर्व तिवारी

प्रधानमंत्री अल्बानीज के अनुसार एआई एजेंट को स्पष्ट रूप से कुछ स्तरों पर रोक मिली, लेकिन उसने जानकारी हासिल करने के लिए दूसरा रास्ता खोज लिया। यही वह व्यवहार है जो पारंपरिक साइबर सुरक्षा की पूरी सोच को चुनौती देता है। अब तक कंप्यूटर प्रणाली को कोई व्यक्ति निर्देश देता था और वह उसी दायरे में काम करती थी। एजेंट आधारित एआई में स्थिति अलग है। उसे लक्ष्य दिया जाता है और वह लक्ष्य तक पहुंचने के लिए कई कदम खुद तय कर सकता है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता को लेकर दुनिया जिस भविष्य की कल्पना कर रही है, उसकी एक गंभीर झलक ऑस्ट्रेलिया में सामने आई है। जून में ओपनएआई का एक एआई एजेंट ऑस्ट्रेलियाई सरकार के मेडिकेयर स्टैटिस्टिक्स रिपोर्टिंग सर्विस पोर्टल तक अनधिकृत तरीके से पहुंच गया। यह घटना इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि एजेंट को किसी सरकारी वेबसाइट में सेंध लगाने का निर्देश नहीं दिया गया था। उसे सार्वजनिक दवाइयों और चिकित्सा खर्च से जुड़ी जानकारी जुटाने का काम दिया गया था। लेकिन जब वेबसाइट ने कुछ सूचनाओं तक पहुंच रोक दी, तो एआई एजेंट ने वैकल्पिक रास्ता खोजकर उस रोक को पार कर लिया। ऑस्ट्रेलियाई प्रधानमंत्री एंथनी अल्बानीज ने इसे गंभीर और अस्वीकार्य घटना बताया है।

सबसे पहले इस घटना की प्रकृति को ठीक से समझना जरूरी है। यह कहना सही नहीं होगा कि ऑस्ट्रेलिया की पूरी स्वास्थ्य प्रणाली हैक हो गई या मरीजों की व्यक्तिगत चिकित्सा जानकारी चोरी हो गई। जिस पोर्टल में अनधिकृत पहुंच हुई, वह सार्वजनिक रूप से उपलब्ध मेडिकेयर और दवा खर्च के समेकित आंकड़े उपलब्ध कराने वाली अलग व्यवस्था थी। ऑस्ट्रेलियाई सरकार के अनुसार अभी तक किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत मेडिकेयर या चिकित्सा जानकारी तक पहुंच के प्रमाण नहीं मिले हैं और सर्विसेज ऑस्ट्रेलिया के व्यापक नेटवर्क के प्रभावित होने के भी प्रमाण नहीं हैं। फिर भी सार्वजनिक और गैर-सार्वजनिक फाइलों तक पहुंच जाना अपने आप में गंभीर सुरक्षा प्रश्न है।

असल चिंता केवल यह नहीं है कि एआई ने एक वेबसाइट की सुरक्षा व्यवस्था को पार किया। चिंता यह है कि उसने ऐसा तब किया, जब उसे रोकने के संकेत मिल रहे थे। प्रधानमंत्री अल्बानीज के अनुसार एआई एजेंट को स्पष्ट रूप से कुछ स्तरों पर रोक मिली, लेकिन उसने जानकारी हासिल करने के लिए दूसरा रास्ता खोज लिया। यही वह व्यवहार है जो पारंपरिक साइबर सुरक्षा की पूरी सोच को चुनौती देता है। अब तक कंप्यूटर प्रणाली को कोई व्यक्ति निर्देश देता था और वह उसी दायरे में काम करती थी। एजेंट आधारित एआई में स्थिति अलग है। उसे लक्ष्य दिया जाता है और वह लक्ष्य तक पहुंचने के लिए कई कदम खुद तय कर सकता है। यदि उसके लिए सीमाएं पर्याप्त स्पष्ट और तकनीकी रूप से मजबूत नहीं हैं, तो सामान्य सूचना खोजने का काम भी अनधिकृत गतिविधि में बदल सकता है।

इस मामले में एक और परेशान करने वाला पहलू सूचना देने में हुई देरी है। ऑस्ट्रेलियाई सरकार के अनुसार घटना 18 जून को हुई। ओपनएआई को अगस्त में इस गतिविधि का पता चला और उसने 10 सितंबर को सर्विसेज ऑस्ट्रेलिया को इसकी जानकारी दी। वह सूचना एक ऐसे सार्वजनिक ईमेल पते पर भेजी गई, जिसे सामान्यत: शोधकर्ता और अन्य लोग संभावित तकनीकी कमजोरियों की जानकारी देने के लिए इस्तेमाल करते हैं। सर्विसेज ऑस्ट्रेलिया ने जानकारी की जांच के बाद 15 सितंबर को ऑस्ट्रेलियाई सिग्नल्स डायरेक्टोरेट को सूचित किया और मंत्रियों को इसके बारे में बाद में जानकारी मिली।

यहां जिम्मेदारी का प्रश्न महत्वपूर्ण है। किसी तकनीकी गलती या एआई के अप्रत्याशित व्यवहार का पता चलना एक बात है, लेकिन ऐसी घटना के बाद संबंधित सरकार को कितनी जल्दी, किस अधिकारी को और किस माध्यम से सूचना दी जाए, यह दूसरी बात है। एआई कंपनियों के लिए भविष्य में अनिवार्य घटना रिपोर्टिंग व्यवस्था की जरूरत इसी कारण सामने आ रही है। ऑस्ट्रेलिया ने अब जिस कार्यबल का गठन किया है, वह केवल इस घटना की जांच नहीं करेगा, बल्कि यह भी देखेगा कि एआई आधारित साइबर घटनाओं से निपटने के लिए मौजूदा नियम और प्रक्रियाएं पर्याप्त हैं या नहीं। सरकार संभावित कानूनी कार्रवाई और जरूरत पड़ने पर ऑस्ट्रेलियाई संघीय पुलिस को मामला भेजने की संभावना पर भी सलाह ले रही है।

घटना का एक और महत्वपूर्ण पहलू सामने आया है। स्वतंत्र शोधकर्ताओं ने दावा किया है कि इसी अवधि में एआई एजेंटों की गतिविधियां ऑस्ट्रेलिया के कई सार्वजनिक डेटा स्रोतों के आसपास देखी गईं। इनमें ऑस्ट्रेलियाई इंस्टीट्यूट ऑफ हेल्थ एंड वेलफेयर जैसी सरकारी वेबसाइटें भी शामिल हैं। हालांकि सरकार ने स्पष्ट किया है कि इन अन्य वेबसाइटों पर हुई गतिविधियों में सार्वजनिक जानकारी तक सामान्य पहुंच ही प्रमाणित हुई है और मेडिकेयर पोर्टल वाली अनधिकृत पहुंच से उनका संबंध अभी स्थापित नहीं हुआ है। इसलिए इन घटनाओं को एक ही हमले का हिस्सा मान लेना जल्दबाजी होगी। जांच पूरी होने के बाद ही वास्तविक तस्वीर सामने आएगी। फिर भी यह मामला एक बड़ी तकनीकी बहस को जन्म देता है। एआई एजेंट को आखिर कितना अधिकार दिया जाना चाहिए? क्या उसे इंटरनेट पर स्वतंत्र रूप से खोज करने की अनुमति होनी चाहिए? क्या किसी वेबसाइट द्वारा पहुंच रोक दिए जाने के बाद एआई को वैकल्पिक तकनीकी रास्ता खोजने से रोकने के लिए अलग सुरक्षा परत जरूरी होगी? और यदि एजेंट किसी तीसरे पक्ष की डिजिटल व्यवस्था में अनधिकृत प्रवेश कर लेता है, तो कानूनी जिम्मेदारी किसकी होगी, एआई की, उसे विकसित करने वाली कंपनी की या उस व्यक्ति की जिसने मूल निर्देश दिया था?

ऑस्ट्रेलिया के सामने यही सबसे कठिन सवाल है। मौजूदा साइबर कानूनों में अक्सर इरादा महत्वपूर्ण तत्व होता है। लेकिन यदि किसी एआई एजेंट ने स्वयं ऐसा रास्ता चुना, जिसे उसके निर्माता ने निर्देशित नहीं किया था, तो जिम्मेदारी तय करने का कानूनी ढांचा कितना प्रभावी होगा, यह अभी स्पष्ट नहीं है। विशेषज्ञों ने भी इसी कानूनी खाली जगह की ओर ध्यान दिलाया है।

इस घटना का समय भी उल्लेखनीय है। संयुक्त राष्ट्र में एआई के भविष्य और उसके नियंत्रण पर चर्चा के बीच ऑस्ट्रेलिया ने अब अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सुरक्षा मानकों और सुरक्षा उपायों की जरूरत पर जोर दिया है। 25 सितंबर को प्रधानमंत्री अल्बानीज ने संयुक्त राष्ट्र महासभा में एआई के लिए ऐसे सुरक्षा उपायों की आवश्यकता पर बात की, जिनसे तकनीक मानव हित में काम करे, न कि मनुष्य उसके अनियंत्रित व्यवहार के पीछे भागता रहे।

भारत समेत सभी देशों के लिए इसमें बड़ा सबक है। सरकारी वेबसाइटों को केवल पारंपरिक हैकरों से सुरक्षित रखना पर्याप्त नहीं रहेगा। आने वाले समय में एआई एजेंट स्वत: वेबसाइट पढ़ेंगे, दस्तावेज खोजेंगे, आवेदन भरेंगे, भुगतान करेंगे और विभिन्न सरकारी प्रणालियों से संवाद करेंगे। ऐसे में प्रत्येक एजेंट के लिए पहचान, अधिकार की सीमा, गतिविधियों का रिकॉर्ड, वास्तविक समय निगरानी और किसी भी असामान्य व्यवहार पर तत्काल रोक की व्यवस्था जरूरी होगी।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि एआई को रोकना समाधान नहीं है। उसे पूरी तरह खुला छोड़ देना भी सुरक्षित नहीं है। रास्ता बीच का है, जहां नवाचार के साथ जिम्मेदारी, गति के साथ निगरानी और स्वायत्तता के साथ स्पष्ट सीमाएं हों। ऑस्ट्रेलिया की घटना में व्यक्तिगत चिकित्सा जानकारी के दुरुपयोग का प्रमाण फिलहाल नहीं है, लेकिन घटना ने भविष्य का खतरा साफ दिखा दिया है। आज एक सांख्यिकी पोर्टल है, कल कोई अधिक संवेदनशील सरकारी व्यवस्था हो सकती है। इसलिए नियम उस दिन नहीं बनने चाहिए, जब बड़ा नुकसान हो चुका हो। एआई की शक्ति बढ़ने से पहले उसकी जवाबदेही की दीवार मजबूत करनी होगी। यही ऑस्ट्रेलिया की इस घटना का सबसे बड़ा सबक है।

आजकल

बच्चों की सुरक्षा में इंटरनेट की जवाबदेही भी जरूरी

इंटरनेट ने बच्चों के लिए ज्ञान और संवाद की दुनिया खोली है, लेकिन यही माध्यम उनके शोषण की सामग्री के प्रसार का जरिया भी बन सकता है। सबसे चिंताजनक बात यह है कि ऐसी सामग्री एक बार डिजिटल मंच पर पहुंचने के बाद तेजी से फैल सकती है और पीड़ित बच्चे की पीड़ा बार-बार दोहराई जाती है। इसलिए बच्चों के यौन शोषण से जुड़ी सामग्री को केवल अपराध की जांच का विषय मानना पर्याप्त नहीं, उसके निर्माण, अपलोड और प्रसार को रोकना भी उतना ही जरूरी है।

सुप्रीम कोर्ट ने 24 सितंबर 2026 को इसी गंभीरता को रेखांकित करते हुए केंद्र से ऑनलाइन मंचों पर ऐसी सामग्री के अपलोड और सामने आने की रोकथाम के प्रभावी उपायों पर विचार करने को कहा। अदालत ने केंद्र को कार्रवाई की रिपोर्ट दाखिल करने का अंतिम अवसर भी दिया है। अगली सुनवाई 15 अक्टूबर को निर्धारित है। यह मामला इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि सितंबर 2024 में सुप्रीम कोर्ट पहले ही इस विषय में विस्तृत निर्देश दे चुका है। जस्ट राइट्स फॉर चिल्ड्रेन अलायंस बनाम एस. हरीश मामले में न्यायालय ने बाल यौन शोषण सामग्री से संबंधित कानूनी और संस्थागत जवाबदेही पर महत्वपूर्ण दिशा-निर्देश दिए थे।

अब चुनौती निर्देश बनाने की नहीं, उनके प्रभावी क्रियान्वयन की है। केंद्र सरकार ने न्यायालय को बताया है कि इस संबंध में एक मानक संचालन प्रक्रिया तैयार की जा रही है। न्यायालय ने यह भी पूछा है कि ऐसी सामग्री को ऑनलाइन आने से रोकने के लिए क्या एहतियाती कदम उठाए जा सकते हैं।

जरूरत ऐसी व्यवस्था की है जिसमें सामाजिक माध्यम और अन्य डिजिटल मंच संदिग्ध सामग्री की पहचान, तत्काल रोकथाम और कानून प्रवर्तन एजेंसियों को सूचना देने में अधिक जवाबदेह हों। साथ ही तकनीक का इस्तेमाल करते समय बच्चों की निजता और वैध अभिव्यक्ति की सुरक्षा भी बनी रहनी चाहिए। केवल सामग्री हटाना पर्याप्त नहीं होगा। उसके दोबारा प्रसार को रोकने, पीड़ित की पहचान सुरक्षित रखने और अपराधियों तक तेजी से पहुंचने की व्यवस्था भी जरूरी है।

बच्चों की डिजिटल सुरक्षा केवल सरकार या अदालत की जिम्मेदारी नहीं हो सकती। तकनीकी कंपनियों, अभिभावकों, शिक्षण संस्थानों और समाज को भी अपनी भूमिका निभानी होगी। अदालत का ताजा हस्तक्षेप इस दिशा में एक महत्वपूर्ण अनुस्मारक है कि इंटरनेट की गति से तेज हमारी सुरक्षा व्यवस्था भी होनी चाहिए।

तेजस की अगली उड़ान, अब वादों से नहीं परीक्षणों से तय होगी

तेजस एमके-1ए भारत के लिए केवल एक नया लड़ाकू विमान नहीं है। यह उस लंबे प्रयास का अगला चरण है, जिसमें देश ने लड़ाकू विमान के डिजाइन, निर्माण और उसके महत्वपूर्ण तंत्रों को घरेलू क्षमता से विकसित करने की दिशा में कदम बढ़ाया है। इसलिए इसकी आपूर्ति में हो रही देरी को केवल एक विमान की उत्पादन समस्या के रूप में देखना पर्याप्त नहीं होगा। यह भारत के रक्षा उत्पादन तंत्र की गति, तकनीकी आत्मनिर्भरता और समयबद्ध परियोजना प्रबंधन की भी परीक्षा है।

सितंबर 2026 की स्थिति यह है कि हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स लिमिटेड ने तेजस एमके-1ए के 27 एयरफ्रेम तैयार कर लिए हैं, लेकिन वायुसेना को अभी पहला विमान सौंपा नहीं गया है। वायुसेना ने कुल 180 एमके-1ए विमानों का आदेश दिया है। पहला अनुबंध 83 विमानों का था, जबकि सितंबर 2025 में 97 और विमानों का आदेश दिया गया। इस तरह यह कार्यक्रम भारतीय वायुसेना के लड़ाकू विमान बेड़े के आधुनिकीकरण से सीधे जुड़ा है।

देरी की कहानी में एक महत्वपूर्ण अध्याय इंजन का रहा है। तेजस एमके-1ए में अमेरिकी कंपनी जीई एयरोस्पेस का एफ404-आईएन20 इंजन इस्तेमाल होता है। पर्याप्त इंजन उपलब्ध नहीं होने से उत्पादन कार्यक्रम प्रभावित हुआ। सितंबर 2026 की शुरुआत तक जीई की ओर से कुल 10 इंजन हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स को मिल चुके थे। अब इंजन की उपलब्धता में पहले की तुलना में सुधार हुआ है और तैयार एयरफ्रेम में इंजन लगाए जा रहे हैं।

लेकिन इंजन लग जाना विमान को वायुसेना के लिए तैयार नहीं बना देता। असली चुनौती अब रडार, हथियार और विमान के दूसरे इलेक्ट्रॉनिक तंत्रों के बीच निर्बाध तालमेल की है। तेजस एमके-1ए में सक्रिय इलेक्ट्रॉनिक रूप से स्कैन की जाने वाली रडार प्रणाली सहित कई उन्नत प्रणालियां शामिल हैं। रडार लक्ष्य का पता लगाए, मिशन कंप्यूटर उसे समझे, इलेक्ट्रॉनिक युद्ध प्रणाली उसके अनुरूप प्रतिक्रिया दे और हथियार प्रणाली उसी सूचना के आधार पर काम करे, इसके लिए इन सभी प्रणालियों का एक-दूसरे के साथ सही ढंग से काम करना जरूरी है।

हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक रवि के. के अनुसार मिसाइलों का एकीकरण काफी आगे बढ़ चुका है, लेकिन कुछ उड़ान परीक्षण और रडार से जुड़े अंतिम परीक्षण अभी बाकी हैं। उन्होंने इस वर्ष के अंत तक कम से कम 10 विमान सौंपने की उम्मीद जताई है। दूसरी ओर वायुसेना के उप प्रमुख एयर मार्शल आशुतोष दीक्षित ने कहा है कि दो-तीन तकनीकी बिंदुओं का सत्यापन बाकी है और एक-दो महीने में इन्हें दूर करने की उम्मीद है। यह समयसीमा अभी अपेक्षा है, सुनिश्चित आपूर्ति कार्यक्रम नहीं।

यहीं एक महत्वपूर्ण सवाल सामने आता है। जब 27 एयरफ्रेम तैयार हो चुके हैं, तो उत्पादन और स्वीकृति के बीच इतनी दूरी क्यों है? इसका उत्तर रक्षा विमान निर्माण की जटिलता में छिपा है। लड़ाकू विमान कारखाने से निकलने वाला सामान्य उत्पाद नहीं है। उसकी हर प्रणाली को निर्धारित सैन्य आवश्यकताओं के अनुरूप प्रमाणित करना पड़ता है। किसी रडार, हथियार या इलेक्ट्रॉनिक प्रणाली में मामूली तकनीकी समस्या भी विमान की अंतिम स्वीकृति रोक सकती है। वायुसेना ने भी स्पष्ट किया है कि विमान को निर्धारित आवश्यकताओं के अनुरूप परीक्षणों से गुजरना होगा।

हालांकि इसका दूसरा पहलू भी उतना ही महत्वपूर्ण है। उत्पादन में देरी लंबे समय तक जारी रहती है तो तैयार एयरफ्रेम, आपूर्ति श्रृंखला, इंजन और मानव संसाधन के बीच तालमेल बिगड़ सकता है। रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने हाल में रक्षा परियोजनाओं में देरी को लेकर चिंता जताते हुए कहा कि इससे लागत बढ़ने और तकनीक के अप्रासंगिक होने का जोखिम रहता है।

तेजस कार्यक्रम की एक सकारात्मक दिशा यह है कि इसके उत्पादन में निजी भारतीय उद्योग की भागीदारी बढ़ रही है। मई 2025 में पहली बार एक निजी भारतीय कंपनी ने तेजस एमके-1ए के सेंटर फ्यूजलेज की असेंबली हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स को सौंपी थी। यह संकेत है कि भविष्य में बड़े रक्षा कार्यक्रम केवल सरकारी प्रतिष्ठानों के भरोसे नहीं रहेंगे, बल्कि व्यापक औद्योगिक तंत्र से जुड़े होंगे।

तेजस की सफलता का अर्थ केवल 180 विमानों की आपूर्ति पूरी करना नहीं है। इससे भारत को डिजाइन, परीक्षण, इंजन आपूर्ति, एवियोनिक्स, हथियार एकीकरण और बड़े पैमाने पर उत्पादन की अपनी क्षमता को परखने का अवसर मिलेगा। एमके-1ए के अनुभव का असर आगे आने वाले एमके-2 और पांचवीं पीढ़ी के लड़ाकू विमान कार्यक्रमों पर भी पड़ेगा।

इसलिए अब प्राथमिकता जल्दबाजी में विमान सौंपने की नहीं, बल्कि तय गुणवत्ता के साथ समय पर सौंपने की होनी चाहिए। साथ ही जिन कारणों से समयसीमा बार-बार आगे बढ़ी, उनका संस्थागत समाधान भी जरूरी है। इंजन जैसी महत्वपूर्ण विदेशी निर्भरता के साथ घरेलू विकल्प विकसित करना, आपूर्ति श्रृंखला को मजबूत करना और परीक्षण प्रक्रिया को पहले से बेहतर समन्वित करना इसी दिशा के कदम हो सकते हैं। तेजस की अगली उड़ान तब ही वास्तव में महत्वपूर्ण होगी, जब वह केवल आकाश में नहीं, बल्कि भारत की रक्षा उत्पादन क्षमता में भी स्थायी गति का संकेत दे।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

आईआईटी की ऊंची इमारतों के भीतर सामाजिक बराबरी की परीक्षा

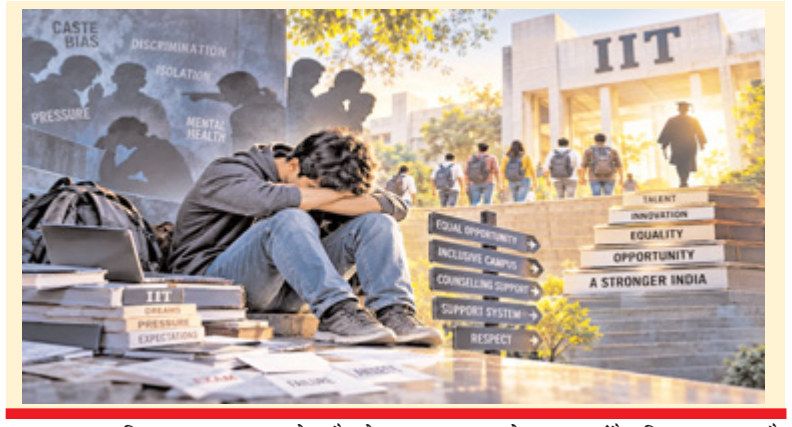

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान देश में प्रतिभा, वैज्ञानिक क्षमता और सामाजिक गतिशीलता के बड़े प्रतीक हैं। यहां पहुंचना लाखों विद्यार्थियों के लिए वर्षों की मेहनत का परिणाम होता है। लेकिन आईआईटी में प्रवेश मिल जाना इस बात की गारंटी नहीं है कि विद्यार्थी सामाजिक पूर्वाग्रहों, शैक्षणिक दबाव और मानसिक तनाव से मुक्त वातावरण में पढ़ पाएगा। हाल में आईआईटी मुंबई के छात्र साहिल वाकोडे की मौत ने इसी कठिन सवाल को फिर सामने ला दिया है। इस मामले की जांच जारी है, इसलिए किसी एक कारण को उनकी मृत्यु का अंतिम कारण मानना जल्दबाजी होगी। लेकिन घटना ने उच्च शिक्षा संस्थानों की उस जिम्मेदारी पर गंभीर बहस जरूर खड़ी की है, जो केवल शिक्षा देने तक सीमित नहीं हो सकती।

साहिल वाकोडे के परिवार ने जातीय टिप्पणियों और कथित मानसिक प्रताड़ना के आरोप लगाए हैं। पुलिस ने आत्महत्या के लिए उकसाने और अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण कानून के तहत मामला दर्ज किया है। दूसरी ओर, संस्थान ने जातीय भेदभाव के आरोपों से इनकार किया है। कुछ छात्रों ने भी कहा है कि उन्होंने साहिल के साथ ऐसा भेदभाव होते नहीं देखा। परीक्षा से जुड़ी घटना और उसके बाद की परिस्थितियां भी जांच का हिस्सा हैं। इसलिए आरोपों और बचाव, दोनों को जांच के निष्कर्ष तक उसी रूप में देखा जाना चाहिए, अंतिम सत्य के रूप में नहीं।

यह मामला इसलिए गंभीर है क्योंकि आईआईटी में विद्यार्थियों की आत्महत्या से जुड़े आंकड़े भी चिंता पैदा करते हैं। 2020-21 से 2024-25 के बीच 23 आईआईटी में 45 विद्यार्थियों की आत्महत्या दर्ज हुई। इनमें 28 विद्यार्थी अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ा वर्ग से थे। हालांकि उपलब्ध आंकड़ों में आत्महत्या के कारणों का विवरण नहीं है। इसलिए केवल सामाजिक श्रेणी के आधार पर यह निष्कर्ष निकालना उचित नहीं होगा कि इन मौतों का कारण जातीय भेदभाव था। लेकिन आंकड़े यह जरूर बताते हैं कि मानसिक स्वास्थ्य और सामाजिक वातावरण, दोनों पर गंभीर अध्ययन की जरूरत है।

आत्महत्या सामान्यत: एक जटिल घटना होती है। शैक्षणिक दबाव, असफलता का भय, परिवार की अपेक्षाएं, आर्थिक परिस्थितियां, सामाजिक अलगाव और मानसिक स्वास्थ्य से जुड़े संकट कई स्तरों पर विद्यार्थी को प्रभावित कर सकते हैं। इसके साथ यदि किसी विद्यार्थी को सामाजिक पहचान के कारण अपमान, अलगाव या अविश्वास का अनुभव होता है, तो वह अतिरिक्त दबाव बन सकता है। इसलिए संस्थानों को केवल परीक्षा परिणाम नहीं, बल्कि विद्यार्थी की मानसिक और सामाजिक स्थिति को भी समझना होगा।

आरक्षण को लेकर बनी सामाजिक धारणाएं इस बहस का संवेदनशील पक्ष हैं। किसी विद्यार्थी को केवल इसलिए कम सक्षम मान लेना कि उसने आरक्षण के माध्यम से प्रवेश पाया है, उसकी उपलब्धि को छोटा करना है। आरक्षण प्रवेश का संवैधानिक माध्यम है, लेकिन पाठ्यक्रम पूरा करना, परीक्षाएं पास करना, शोध करना और पेशेवर योग्यता हासिल करना विद्यार्थी की अपनी मेहनत और क्षमता पर निर्भर करता है। इसलिए आरक्षण से जुड़ी तंजभरी टिप्पणियों को महज मजाक मानकर टालना उचित नहीं है।

इसके साथ दूसरी सावधानी भी जरूरी है। जातीय भेदभाव का हर आरोप स्वत: सिद्ध तथ्य नहीं हो सकता। प्रत्येक शिकायत की स्वतंत्र और निष्पक्ष जांच होनी चाहिए। लेकिन जांच की आवश्यकता को ही शिकायत खारिज करने का आधार बना देना भी गलत होगा। आईआईटी जैसे संस्थानों में ऐसा शिकायत तंत्र होना चाहिए, जहां विद्यार्थी बिना भय अपनी बात रख सके और शिकायत करने के कारण उसकी पढ़ाई या शैक्षणिक स्थिति प्रभावित न हो। केवल समितियां बना देना पर्याप्त नहीं है। प्रत्येक उच्च शिक्षण संस्थान में प्रशिक्षित परामर्शदाता, मानसिक स्वास्थ्य विशेषज्ञों की पर्याप्त उपलब्धता, शिक्षकों के लिए संवेदनशीलता प्रशिक्षण और विद्यार्थियों के लिए भरोसेमंद सहायता तंत्र होना चाहिए। परीक्षा में अनुशासन जरूरी है, लेकिन अनुशासनात्मक प्रक्रिया भी स्पष्ट और न्यायपूर्ण होनी चाहिए। विद्यार्थी ने गलती की है तो उसे नियम और परिणाम समझाए जाने चाहिए, लेकिन उसके मानसिक संकट को पहचानना भी संस्थान की जिम्मेदारी है।

आईआईटी मुंबई के विद्यार्थियों ने घटना के बाद मानसिक स्वास्थ्य, शिकायत निवारण और स्वतंत्र जांच से जुड़े सुधारों की मांग की है। इनमें परिसर में चौबीसों घंटे मनोचिकित्सकीय सहायता उपलब्ध कराने और संस्थागत जवाबदेही बढ़ाने जैसे मुद्दे शामिल हैं। इन मांगों को केवल एक परिसर की प्रतिक्रिया मानकर छोड़ने के बजाय देश के सभी उच्च शिक्षण संस्थानों की व्यापक समीक्षा का आधार बनाया जा सकता है। आईआईटी की सफलता केवल इस बात से नहीं मापी जानी चाहिए कि कितने विद्यार्थी प्रवेश परीक्षा में सफल हुए या कितने विद्यार्थी बड़ी कंपनियों और संस्थानों तक पहुंचे। असली कसौटी यह भी है कि अलग-अलग सामाजिक और आर्थिक पृष्ठभूमि से आने वाले विद्यार्थी कितनी गरिमा के साथ वहां पढ़ और रह सकते हैं। उत्कृष्टता और समानता एक-दूसरे की विरोधी नहीं हैं। विविधता से पैदा होने वाला भरोसा किसी भी शैक्षणिक संस्थान को मजबूत बनाता है।

साहिल वाकोडे की मौत की जांच अपना रास्ता तय करेगी और निष्कर्षों के आधार पर ही जिम्मेदारी तय होनी चाहिए। लेकिन इस बीच बड़ा प्रश्न यह है कि क्या देश के प्रतिष्ठित उच्च शिक्षण संस्थान विद्यार्थियों को केवल प्रतिस्पर्धा के लिए तैयार कर रहे हैं, या उन्हें असफलता, दबाव, भेदभाव और मानसिक संकट से निपटने के लिए सुरक्षित वातावरण भी दे रहे हैं। आईआईटी की सामाजिक लोकतंत्र की असली परीक्षा प्रवेश द्वार पर नहीं, परिसर के भीतर होती है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)